International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

आभासी दुनिया में मानवीय संवेदनाओं का ह्रास: संस्कृत साहित्य के दृष्टिकोण से एक विमर्श

डॉ. अराधिका

सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग, बाबा बरुआ दास पी .जी.कालेज, परुइया आश्रम, अम्बेडकरनगर

मुख्य शब्द
आभासी, आत्मकेंद्रित, संवेदनात्मक, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, सहानुभूति एवं समानुभूति, पुनर्स्मरण, मिथ्या वृत्ति, दौर्बल्यता, उत्तरदायित्व, डिजिटाइजेशन, सह-अस्तित्व इत्यादि

सारांश–वर्तमान युग डिजिटल युग है।इस डिजिटलाइज युग में मानव वास्तविक जीवन में जीवनयापन नहीं कर रहा है, बल्कि आभासी संसार को वास्तविक संसार मानकर उसी में जीवननिर्वाह कर रहा है। आभासी संसार में जीवनयापन करने के कारण मानव में अन्तर्सम्बन्ध नहीं बन पा रहा है, जिसके कारण मानवीय संवेदनाओं का ह्रास दिन-प्रतिदिन हो रहा है। ऐसे समय में मानवीय संवेदनाओं के संरक्षक के रुप में संस्कृत साहित्य की प्रासंगिकता बढ़ जाती है।संस्कृत साहित्य मानवता, सह-अस्तित्व, करुणा, संयम और सत्य का जो शाश्वत संदेश देता है, वही इस संकट का समाधान है।

इक्कीसवीं शताब्दी का मानव डिजिटल प्रौद्योगिकी से संचालित आभासी संसार में जीवनयापन कर रहा है। सोशल मीडिया, कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI), वर्चुअल नेटवर्किंग और डिजिटल संचार ने मानव जीवन को त्वरित, सुविधाजनक और वैश्विक बनाया है।इस आभासी (डिजिटल) युग में मनुष्य का जीवन तकनीकी साधनों से अत्यधिक प्रभावित है। संचार की तीव्रता तो बढ़ी है, परन्तु मानवीय संवेदनाओं का क्षरण भी स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। आज संबंधों में औपचारिकता, आत्मकेन्द्रितता, प्रतिस्पर्धा एवं आभासी पहचान की प्रवृत्ति ने मानवीय संवेदनाओं - सहानुभूति, करुणा, मैत्री तथा आत्मीयता, धैर्य एवं नैतिकता का क्रमिक ह्रास भी दृष्टिगोचर हो रहा है। ऐसे समय में संस्कृत साहित्य मानवता के शाश्वत मूल्यों का उद्घोष करता है। प्रस्तुत शोध-पत्र में आभासी युग में संवेदनात्मक ह्रास की समस्या का विश्लेषण करते हुए मानवीय संवेदनाओं के संरक्षक के रूप में अधिष्ठित संस्कृत साहित्य की प्रासंगिकता को प्रतिपादित किया गया है।

संवेदना शब्द किसी एक विशेष अर्थ को व्यंजित नहीं करता बल्कि यह विविध अर्थों का बोधक है। संवेदना को हम व्याकरणिक तथा मनोवैज्ञानिक दोनों ही रूपों से समझ सकते हैं। संवेदना शब्द की व्युत्पत्ति 'सम्' उपसर्ग पूर्वक 'विद्' (वेदना) धातु में ल्युट् प्रत्यय[1] लगाने से होती है अर्थात् सम् + वेदना=संवेदना। यह संवेदना का व्याकरणिक अर्थ है। इसका शाब्दिक अर्थ है–प्रत्यक्ष ज्ञान, अनुभूति, भावना जागृति, उत्तेजना आदि। अत: संवेदनाओं का सीधा सम्बन्ध हमारी भावनाओं और बोध से होता है। संवेदना का भाव केवल मानव को मानव से ही नहीं जोड़ता बल्कि पशु-पक्षियों, वनस्पतियों आदि के साथ भी संवेदनात्मक संबंध जुड़ जाता हैं।मानव जीवन में संवेदना का विशेष महत्त्व है। मनोवैज्ञानिक आधार पर मानव के मन व मस्तिष्क दोनों से संवेदना का चिर सम्बन्ध है। आत्मीयता की भावना, सामूहिकता,परस्पर संवाद, सहानुभूति व सहानुभूति, नैतिक आचरण,आत्मसंयम, वैश्विक बन्धुत्व व सह-अस्तित्व, इत्यादि मानवीय मूल्य मानवीय संवेदनाओं से अन्तर्सम्बन्धित हैं।समृद्ध संस्कृत साहित्य इन्हीं मानवीय संवेदनाओं की समानुभूति कराने एवं उन्हें चिरस्थायी बनाने में सहायक है।

आभासी युग (Virtual Age) वह कालखंड है, जिसमें मनुष्य का जीवन, संचार, शिक्षा, व्यापार, मनोरंजन तथा सामाजिक संबंध मुख्यतः डिजिटल एवं इंटरनेट आधारित माध्यमों पर निर्भर हो गए हैं। इसमें वास्तविक (भौतिक) संसार के साथ-साथ एक 'डिजिटल संसार' भी सक्रिय रहता है, जहाँ लोग मोबाइल, सोशल मीडिया, कृत्रिम बुद्धिमत्ता और ऑनलाइन मंचों के माध्यम से जुड़ते हैं।आज के आभासी युग में इंटरनेट और

सोशल मीडिया आदि ने न केवल संवाद का तरीका बदला है, बल्कि सोचने और संबंध बनाने की शैली भी परिवर्तित कर दी है। अस्तु जब संचार का माध्यम स्क्रीन हो जाता है, तो भाव-भंगिमा, स्पर्श और प्रत्यक्ष अनुभव लुप्त हो जाते हैं। परिणामस्वरूप संवाद यांत्रिक बनता है और संवेदना की गहराई अपेक्षाकृत कम हो जाती है। जहां अनुभूति होती है, वहीं मानवीय संवेदनाएं जीवन्त रहती हैं, किन्तु इस डिजिटलीकरण युग में संवेदनाएं मृतप्राय होती जा रही है। आभासी युग में मानवीय संवेदनाओं का ह्रास किस रुप में हो रहा है,उसका बिन्दुवार विश्लेषण इस प्रकार है ---

- **डिजिटल निर्भरता**– डिजिटलीकरण के इस युग में प्रत्येक कार्य आनलाइन माध्यम से ही सम्पादित हो जा रहें हैं,चाहे वह शिक्षा हो, मनोरंजन का साधन हो या शार्पिंग हो। सबकुछ एक क्लिक की दूरी पर है, हमें जो भी चाहिए,वह सब हमें अपने स्थान पर ही उपलब्ध हो जा रहा है, जिसके कारण प्रत्यक्ष संवाद नहीं हो पाता है और भावनात्मक जुड़ाव उत्पन्न नहीं हो पाता, क्योंकि उसके लिए प्रत्यक्ष संवाद अथवा मिलन आवश्यक है।इसीलिए भारतीय दर्शन में 'प्रत्यक्ष' को प्रथम प्रमाण माना गया है, क्योंकि प्रत्यक्ष संवाद में ही सत्य और भाव स्पष्ट होते हैं-- **"प्रत्यक्षानुमानागमाः प्रमाणानि।"**[2]
- **सहानुभूति व समानुभूति**- आज के आभासी युग में मानव डिजिटल अरेस्ट हो गया है अर्थात् अधिकाधिक समय डिजिटल माध्यमों के साथ व्यतीत कर रहा है।आज हर समय मानव के साथ उसका सचलयंत्र साथ -साथ रहता है। प्रत्यक्ष सम्पर्काभाव के कारण हृदय में अनुभूति उत्पन्न ही नहीं हो रही है, जिसके कारण मानव परपीड़ा को अनुभव ही नहीं कर पा रहा है। संस्कृत साहित्य में कहा गया है कि – "**आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्"**[3] अथवा **"आत्मवत् सर्वभूतेषु यः पश्यति से पण्डित :"**[4] अर्थात् जो स्वयं को अच्छा न लगे,वैसा आचरण दूसरों के साथ न करना तथा अपने समान सभी प्राणियों को देखना,यह समत्व एवं सहानुभूति की पराकाष्ठा संस्कृत साहित्य में निहित है।
- **आत्मीयता में कमी**- आभासी संवाद एवं सांदेशिक आदान-प्रदान के कारण आत्मीयता में कमी आ रही है।एक ही परिवार में रह रहे चार लोगों के मध्य भी घनिष्ठ आत्मीय संबंध स्थापित नहीं हो रहा है,समाज तक इसका प्रसार तो दूर की बात है।आज की जीवनशैली आत्मकेंद्रित होती जा रही है। अहम् का प्राबल्य हो गया है। जबकि संस्कृत साहित्य **वसुधैव कुटुम्बकम्** की भावना का परिपोषक है-
  "अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम्,
  उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्।।"[5]
- **आत्मसंयम एवं विवेक का ह्रास** – इण्टरनेट के विकास ने जहां ज्ञान की वृद्धि की, वहीं कहीं न कहीं इसने स्मृति को क्षीण भी बना दिया है।हम अपने मस्तिष्क का प्रयोग कर उसका पुनर्स्मरण नहीं कर पा रहें हैं। डिजिटल अरेस्ट जैसी स्थिति से बाहर निकलना के लिए और स्वस्थ बौद्धिक विकास के लिए योग अत्यंत आवश्यक है। गीता में कहा गया है कि – **"इन्द्रियाणि मनो बुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते"**[6]।आभासी संसार का स्वामी या दास बनना मन पर निर्भर है – **"मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः"**।[7]
- **मानसिक एकाकीपन** – डिजिटल युग में व्यक्तियों के सोशलमीडिया पर लाखों मित्र हैं, फिर भी मानव अकेला है। लाखों आभासी मित्रों की अपेक्षा एक ही भौतिक मित्र होना आवश्यक है, जिसमें हम अपने मनोभावों को प्रकट कर सकें, हितोपदेश में कहा गया है कि –
  "न मित्रं सुखसंपन्नं न मित्रं दुःखभाजनम्।
  मित्रेण विना न स्यात् सुखं न च परित्राणम्॥"[8]
- **मिथ्यावृत्ति**- इस डिजिटल युग में जहां सूचनाओं का प्राचुर्य है, वहीं फेक न्यूज़ एवं मिथ्या प्रचार की भी कमी नहीं है।आज सोशलमीडिया पर कोई भी बिना किसी आधार के ही मिथ्या एवं भ्रामक सूचनाएं प्रेषित कर देता है, जबकि संस्कृत वाङ्मय "सत्यं वद,धर्मं चर "[9]आदर्श के पालन पर जोर देता है। वास्तव में डिजिटल संवाद का आदर्श सूत्र **"अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत् "**[10] होना चाहिए।
- **सामूहिकता एवं समन्वयता का दौर्बल्य**- आभासी युग में व्यक्ति का जीवन अत्यधिक व्यक्तिगत और स्क्रीन-केंद्रित हो गया है। डिजिटल माध्यमों ने संपर्क तो बढ़ाया है, परंतु सामूहिक सहभागिता की भावना को कम भी किया है। परिवार, समाज और समुदाय के पारंपरिक मिलन-स्थल अब आभासी मंचों में

परिवर्तित हो गए हैं। परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष संवाद, सहयोग और सामूहिक निर्णय-प्रक्रिया कमजोर हुई है।भारतीय संस्कृति में सामूहिकता को अत्यंत महत्त्व दिया गया है–

"संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।"[1]1

इस डिजिटल विखंडन के युग में वैदिक साहित्य मानसिक एकता के आदर्श का प्रतिपादन करते हैं – **"समानी वः आकूतिः समाना हृदयानि वः"[1]2**

- **प्रकृति एवं संवेदनात्मक सौन्दर्य में ह्रास** - आभासी युग में मनुष्य का अधिकांश समय डिजिटल उपकरणों के साथ व्यतीत होने के कारण प्रकृति के साथ उसका प्रत्यक्ष संपर्क कम हो गया है। प्राकृतिक सौन्दर्य का अनुभव अब चित्रों और स्क्रीन तक सीमित होता जा रहा है। परिणामस्वरूप संवेदनात्मक अनुभूति में कमी आ रही है। प्रकृति के सानिध्य से उत्पन्न शांति, करुणा और संतुलन का स्थान कृत्रिम उत्तेजना ने ले लिया है।भारतीय साहित्य में प्रकृति को चेतन और सहचर माना गया है। कालिदास की कृतियों में प्रकृति और मानव-हृदय का अद्भुत समन्वय मिलता है। ऋतुसंहार में ऋतुओं का वर्णन संवेदनात्मक सौन्दर्य का उत्कृष्ट उदाहरण है।अभिज्ञानशाकुंतलम् में दुष्यंत व शकुंतला का प्रेम मानवीय संवेदना की कोमल अभिव्यक्ति है।[1]3
- **त्वरित संतुष्टि की प्रवृत्ति** – आज अनेकानेक समस्याओं का समाधान इण्टरनेट पर शीघ्र ही प्राप्त हो जाता है, जिससे धैर्य की प्रवृत्ति का अभाव हो रहा है सा ही प्रतीक्षा और परिश्रम जैसे गुण क्षीण होते जा रहे हैं। व्यक्ति दीर्घकालिक लक्ष्य की अपेक्षा तात्कालिक सुख को अधिक महत्व देने लगा है।सोशल मीडिया की 'लाइक' और 'प्रशंसा' संस्कृति ने भी तत्काल मान्यता पाने की मानसिकता को प्रबल किया है। इससे आत्मनियंत्रण और संतुलन में कमी आती है।भारतीय शास्त्र धैर्य को सर्वोच्च साधन मानते हैं–**"धैर्यं सर्वत्र साधनम्।"**इसी प्रकार महाभारत में कहा गया है–**"न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति।"अर्थात्** इच्छाएँ उपभोग से शांत नहीं होतीं; संयम ही वास्तविक संतोष का मार्ग है।
- **सामाजिक उत्तरदायित्व में गिरावट** – आभासी युग में व्यक्ति का ध्यान व्यक्तिगत सुविधा और निजी अभिव्यक्ति पर अधिक केंद्रित हो गया है। डिजिटल माध्यमों ने आत्म-प्रदर्शन की प्रवृत्ति को बढ़ाया है, जिससे सामूहिक कर्तव्य-बोध में कमी आई है। सामाजिक समस्याओं पर सक्रिय सहभागिता के स्थान पर केवल ऑनलाइन प्रतिक्रिया तक सीमित रह जाना एक सामान्य प्रवृत्ति बनती जा रही है।पूर्वकाल में समाज, परिवार और राष्ट्र के प्रति उत्तरदायित्व जीवन-मूल्य का अंग था, किंतु आज व्यक्तिगत स्वतंत्रता को अधिक प्राथमिकता दी जा रही है। इससे सहयोग, त्याग और सेवा की भावना क्षीण होती है।भारतीय चिंतन में कर्तव्य को सर्वोपरि माना गया है–

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।" [1]4

यह श्लोक निष्काम कर्म और सामाजिक उत्तरदायित्व की प्रेरणा देता है। अतः आभासी युग में संतुलित दृष्टिकोण अपनाकर व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सामाजिक दायित्व के बीच सामंजस्य स्थापित करना आवश्यक है।

अस्तु मानवीय संवेदना की बुनियाद मानवीयता पर निर्भर है।आज मनुष्य अपनी संवेदना खोता जा रहा है।आज मनोमस्तिष्क से संवेदनशीलता का ह्रास होता जा रहा है,यथा- किसी घटनास्थल पर सहायता करने के बजाय वीडियो बनाना, गम्भीर स्थिति होने पर भी अस्पतालों में धनाभाव के कारण इलाज न करना, किसी के घर में अकस्मात् मृत्यु होने पर संवेदना प्रकट करने के लिए प्रत्यक्षतः न पहुंचकर आभासिक संवेदना प्रकट करना इत्यादि मानवीय संवेदना के ह्रास के प्रत्यक्ष उदाहरण है। महात्मा गांधी जी ने बिल्कुल सही कहा था कि –"**प्रौद्योगिकी मनुष्य की सेविका होनी चाहिए, स्वामिनी नहीं।**इस डिजिटलाइजेशन के युग में संस्कृत साहित्य अत्यंत प्रासंगिक एवं महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि संस्कृत साहित्य में मानव जीवन का मूल तत्त्व "संवेदना" को माना गया है।भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में तो "रस" की संकल्पना ही मानवीय भावों की परिष्कृत अभिव्यक्ति के रुप में हुई है—

"विभावानुभावाव्यभिचारभावाद्संयोगाद्रसनिष्पत्ति:"[15]

रससिद्धान्त बताता है कि सहृदयता के बिना कला का आस्वादन सम्भव ही नहीं है। संवेदना के अभाव में मानव नैतिक पतनोन्मुख भी हो रहा है। ऐसे में भारतीय संस्कृति की परिपोषक संस्कृत साहित्य प्रासंगिक हो गया है, इसीलिए आज भारतीय ज्ञान परम्परा (Indian Knowledge System) को बढ़ावा दिया जा रहा है ताकि मानवीय मूल्यों का संरक्षण एवं संवर्धन किया जा सके।

आभासी संसार स्वयं में दोषपूर्ण नहीं है; दोष उसके असीमित और अविवेकी उपयोग में है। यदि संसाधनों का सही तरीके से प्रयोग किया जाय तो यह किसी वरदान से कम नहीं है।जिस उद्देश्य से किसी कार्य का प्रारंभ किया जाय, उसे उसी प्रकार से पूर्ण किया जाय तो इस प्रकार की सामाजिक अथवा मानसिक विकार उत्पन्न ही न हो। परंतु ऐसी समस्याएं आज आम हो गई हैं, ऐसे में संस्कृत साहित्य मानवता, सह-अस्तित्व, करुणा, संयम और सत्य का जो शाश्वत संदेश देता है, वही इस संकट का समाधान है।आज आवश्यकता है कि हम तकनीक को साधन बनाएं, साध्य नहीं।"विद्या ददाति विनयं, विनयाद् याति पात्रताम्।[16]संस्कृत साहित्य का यह संदेश आज भी उतना ही प्रासंगिक है।यदि डिजिटल युग में विनय, संवेदना और करुणा का समावेश किया जाए, तो आभासी संसार भी मानवता के उत्कर्ष का साधन बन सकता है।यदि हम 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना को आत्मसात करें, तो आभासी संसार भी मानवीय संवेदना से परिपूर्ण हो सकता है। निष्कर्षत: इस आभासी युग में मानवीय संवेदनाओं के संरक्षण एवं संवर्धन हेतु संस्कृत साहित्य अत्यंत प्रासंगिक एवं आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अमरकोश
2. न्यायसूत्र 1.1
3. महाभारत, अनुशासन पर्व
4. भगवद्गीता 6.32
5. महोपनिषद् 4.71
6. भगवद्गीता 3.40
7. अमृतबिन्दूपनिषद्,अध्याय 2
8. हितोपदेश, विष्णु शर्मा
9. तैत्तिरीयोपनिषद् 1.11
10. भगवद्गीता 17.15
11. ऋग्वेद 10.191.2
12. ऋग्वेद 10.191.4
13. कालिदास ग्रंथावली
14. भगवद्गीता 2.47
15. नाट्यशास्त्र, भरतमुनि
16. हितोपदेश, विष्णु शर्मा